

मध्यस्थ दर्शन की दृष्टि में मानव-प्रकृति संबंध और पर्यावरणीय संतुलन

सुनील गुप्ता

शोधार्थी, आरजेड-161, सी-2/161, स्ट्रीट - 4,
महावीर एन्क्लेव, पालम, नई दिल्ली - 110045
sgupta.rc@gmail.com

शोध सारांश

यह शोध पत्र मध्यस्थ दर्शन की दृष्टि से मानव-प्रकृति संबंध और पर्यावरणीय संतुलन का अध्ययन करने का प्रयास करता है। इसका उद्देश्य उन तरीकों का पता लगाना है जिनसे हम सामंजस्यपूर्ण ढंग से सह-अस्तित्व पूर्वक रह सकें। यह समकालीन पर्यावरणीय चुनौतियों का परीक्षण करता है और मध्यस्थ दर्शन सह-अस्तित्ववाद (सह-अस्तित्व दर्शन) के प्रकाश में समाधान खोजने का प्रयास करता है। शोध पद्धति वैचारिक और दार्शनिक शोध पर आधारित है। इस अध्ययन का उद्देश्य सह-अस्तित्व दर्शन के दृष्टिकोण से वैश्विक और पर्यावरणीय चुनौतियों के समाधान के वर्तमान विमर्श में योगदान देना है।

यह शोध पत्र न केवल दार्शनिक विमर्श प्रस्तुत करता है बल्कि समकालीन पर्यावरणीय नीतियों और सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) से भी संवाद स्थापित करता है। इसमें यह तर्क दिया गया है कि यदि मानव चेतना और आचरण सह-अस्तित्व के आधार पर विकसित किए जाएँ तो पर्यावरणीय संकटों को कम किया जा सकता है। इस प्रकार यह अध्ययन दार्शनिक चिंतन और व्यावहारिक नीति निर्धारण के बीच एक सेतु का कार्य करता है, जो वैश्विक और स्थानीय दोनों स्तरों पर पर्यावरणीय न्याय को बढ़ावा देने की दिशा में उपयोगी हो सकता है।

मुख्य शब्द: मध्यस्थ दर्शन, सहअस्तित्व, पर्यावरणीय संतुलन, मानव-प्रकृति संबंध, ए. नागराज, जीवन विद्या, पर्यावरणीय दर्शन, सतत विकास

परिचय

आज का युग पर्यावरणीय संकट और मानव-प्रकृति संबंधों में असंतुलन का युग है। बीसवीं शताब्दी के अंत तक मानव जाति सामाजिक एवं पर्यावरणीय संघर्षों से घिरी हुई है। इस संदर्भ में श्री ए. नागराज द्वारा प्रतिपादित 'मध्यस्थ दर्शन' या 'सहअस्तित्ववाद' एक महत्वपूर्ण दार्शनिक प्रस्ताव है जो मानव-प्रकृति संबंधों को एक नवीन दृष्टिकोण से देखता है। यह शोध पत्र मध्यस्थ दर्शन की दृष्टि में मानव-प्रकृति संबंध और पर्यावरणीय संतुलन की अवधारणाओं का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

जैसे-जैसे दुनिया शहरीकरण, जनसंख्या और औद्योगीकरण के साथ तेजी से बढ़ रही है, प्रकृति का संतुलन प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो रहा है। यह एक-दूसरे और प्रकृति के साथ मानव-केंद्रित व्यवहार के कारण है। हमारा पूरा ध्यान

इस बात पर है कि हम अपने लिए लाभ को अधिकतम कैसे कर सकते हैं। मिट्टी, हवा, पानी, खनिज और पशु-पंछियों के साथ हमारा संबंध भी चिंता का विषय है। ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और प्रदूषित नदियाँ इसका उदाहरण हैं कि हम अपने पर्यावरण को किस हद तक नष्ट कर चुके हैं। पर्यावरण का शोषण हमारी आवश्यकताओं की समझ की कमी और अतयाधिक लालच प्रवर्ती का परिणाम है। हमें अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त मात्रा में प्राकृतिक संसाधन प्राप्त होते हैं। और यह हमारी जिम्मेदारी भी है कि हम उनका संरक्षण करें और उनका विवेकपूर्ण उपयोग करें।

वर्तमान समय में विभिन्न व्यक्तिजन और संगठन इन मुद्दे पर काम कर रहे हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन और पर्यावरणीय क्षरण जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। हमें सामंजस्यपूर्ण जीवन के एक साझा लक्ष्य की दिशा में मिलकर काम करना चाहिए। मध्यस्थ दर्शन हमें वह अवसर प्रदान करता है। इस शोध पत्र के माध्यम से मानव-प्रकृति के सह-अस्तित्व संबंध को अध्ययन करने का प्रयास किया है। इसका उद्देश्य उन तरीकों का पता लगाना है जिनसे मानव प्राकृतिक सतुलन के साथ रह सके।

भारतीय दार्शनिक परंपराओं में प्रकृति के प्रति सम्मान और सहजीवन का विचार हमेशा से मौजूद रहा है, किन्तु आधुनिक औद्योगिक समाज ने इस दृष्टि से दूरी बना ली है। मध्यस्थ दर्शन इस दूरी को पाटने का प्रयास करता है और यह प्रतिपादित करता है कि मनुष्य की वास्तविक समृद्धि केवल भौतिक संसाधनों के संचय में नहीं बल्कि प्रकृति और समाज के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने में निहित है। इस प्रकार, यह दर्शन आज की पर्यावरणीय चुनौतियों को केवल संकट के रूप में नहीं बल्कि मानवता के आत्मबोध और चेतना-विकास के अवसर के रूप में देखता है।

अनुसंधान उद्देश्य

इस शोध पत्र के निम्न उद्देश्य हैं:

- मध्यस्थ दर्शन में सहअस्तित्व की अवधारणा का अध्ययन
- मानव-प्रकृति संबंधों की मध्यस्थ दर्शन की व्याख्या का विश्लेषण
- पर्यावरणीय संतुलन हेतु मध्यस्थ दर्शन के प्रस्तावों का मूल्यांकन
- समसामयिक पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में मध्यस्थ दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन

ऊपर दिए गये उद्देश्यों का अनुसरण करते हुए यह अध्ययन मध्यस्थ दर्शन के दृष्टिकोण से वैश्विक और पर्यावरणीय चुनौतियों के समाधान के वर्तमान विमर्श में योगदान देगा। यह अध्ययन इसलिए भी उपयोगी है क्योंकि यह मानव और पर्यावरण दोनों के परस्पर हित के बारे में बात करता है। इस शोध पत्र में शोध पद्धति वैचारिक और दार्शनिक शोध पर आधारित है।

मध्यस्थ दर्शन: एक परिचय

मध्यस्थ दर्शन (जीवन विद्या) या 'सहअस्तित्ववादी दर्शन' की खोज श्री ए. नागराज द्वारा की गयी है। यह उन्हें ध्यानात्मक 'साधना-समाधि-संयम' की पद्धति के माध्यम से प्राप्त हुई है (नागराज, ए. 1988)। "मध्यस्थ दर्शन (सह-अस्तित्ववाद) एक नवीन समकालीन ज्ञान प्रणाली (दर्शन) है जो 1500 वर्षों के बाद भारतीय उपमहाद्वीप (भारत) में उत्पन्न हुई है। यह अतीत की परंपराओं से स्वतंत्र है" (<https://madhyasth-darshan.info/>, 2025)। यह दर्शन प्रतिपादित करता है कि 'अस्तित्व मूलतः सहअस्तित्व के रूप में है'। सहअस्तित्व ब्रह्मांड का अंतर्निहित नियम है। यह अस्तित्वगत वास्तविकता का आधार है (मध्यस्थ दर्शन)। सहअस्तित्व सर्वव्यापी ऊर्जा और पदार्थ का सहअस्तित्व है और यह सहअस्तित्व अविभाज्य, अविनाशी और अक्षय है। मध्यस्थ दर्शन के अनुसार: "सहअस्तित्व नित्य वर्तमान और प्रभावी है। मानव, मानवत्व से संपन्न होने की सम्भावना मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद के रूप में समझदारी को विकसित करके जागृत होने की सम्भावना समीचीन है" (madhyasth-darshan.info)।

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार: "मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद) सार्वभौम मानवीय संविधान, शिष्टा व् स्वराज व्यवस्था को प्रतिपादित करता है। 'मध्यस्थ दर्शन' रहस्य से मुक्त है। यह मनुष्य के सम्पूर्ण आयामों की यथार्थता, वास्तविकता और सत्यता को अध्ययन गम्य और बोध गम्य कराता है। 'मध्यस्थ दर्शन' अनुभव की अभिव्यक्ति, सर्वोत्तुखी समाधान की संप्रेषणा, न्याय पूर्ण व्यवहार, नियम पूर्ण व्यवसाय व् आचरण पूर्ण पद्धति से जीने की कला को करतलगत कराता है। यह 'चेतना विकास मूल्य शिष्टा' रूप में अध्ययनगम्य है" (madhyasth.org)।

मानव-प्रकृति संबंध: मध्यस्थ दर्शन की दृष्टि

प्रकृति में अंतर्निहित व्यवस्था

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार प्रकृति में अंतर्निहित सामंजस्य और संतुलन है। व्यवस्था और संगठन प्रकृति में अंतर्निहित हैं। वास्तव में, मानव के रूप में हम केवल व्यवस्थित अवस्थाओं का ही अध्ययन और बोध कर सकते हैं। प्रकृति की हर वस्तु एक-दूसरे की पूरक है और परस्पर एक-दूसरे को समृद्ध करती है। प्रकृति सत्ता में स्वयंस्फूर्त विधि से, स्वयं प्रवृत्त विधि से प्रेरणा पाती ही रहती है। जैसे कपड़ा पानी में भीगता है, पानी कपड़े को भीगाता नहीं है, भीगने का गुण कपड़े में ही है, पानी - पानी ही है। उसी प्रकार व्यापक वस्तु ऊर्जा होने के कारण प्रकृति उसमें ऊर्जा संपन्न रहती है। इस ऊर्जा संपन्नता के फलस्वरूप प्रकृति में क्रियाशीलता, विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम और जागृति का प्रकटन होता है। यह सम्पूर्ण प्रक्रिया सहअस्तित्व के नियम के अनुसार संचालित होती है।

प्रकृति की चार अवस्थाएं और उनका परस्पर संबंध

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार अस्तित्व सहअस्तित्व के रूप में है, "व्यापक सत्ता में संपृक्त प्रकृति" के रूप में। प्रकृति चार मुख्य अवस्थाओं में व्यवस्थित है:

पदार्थ अवस्था - यह प्रकृति की सबसे मूलभूत अवस्था है। इसमें सभी भौतिक और रासायनिक तत्व शामिल हैं। पदार्थ अवस्था में स्थिरता और संरचनात्मक व्यवस्था होती है। यह अवस्था निरंतर विकास क्रम में रहती है और अपने गुण, स्वभाव और धर्म के अनुसार व्यवहार करती है।

प्राण अवस्था - यह जैविक ऊर्जा की अवस्था है जो पदार्थ अवस्था से विकसित होती है। प्राण अवस्था में जीवनी शक्ति का प्रवाह होता है। यह वनस्पति जगत का आधार है। इस अवस्था में पोषण, वृद्धि और प्रजनन की क्रियाएं संपन्न होती हैं।

जीव अवस्था - यह चेतना की प्रारंभिक अवस्था है जिसमें संवेदना और गति की क्षमता होती है। जीव अवस्था में इच्छा, आशा और भय की अभिव्यक्ति होती है। पशु-पक्षी इस अवस्था के प्रतिनिधि हैं। यह अवस्था प्राण अवस्था पर आधारित होकर अधिक जटिल व्यवहार प्रदर्शित करती है।

ज्ञान अवस्था - यह मानव अवस्था है। यह चेतना की सर्वोच्च अवस्था है जिसमें कल्पना, विवेक और समझने की क्षमता होती है। ज्ञान अवस्था में मानव केवल जीविका के लिए नहीं बल्कि अर्थ और उद्देश्य के लिए जीता है।

मध्यस्थ दर्शन के आलोक में प्रकृति की चार अवस्थाएँ — पदार्थ, प्राण, जीव और ज्ञान — अस्तित्व के सहअस्तित्वकारी क्रम को स्पष्ट करती हैं। पदार्थ अवस्था प्रकृति की सबसे मूलभूत और स्थिर अवस्था है जिसमें भौतिक एवं रासायनिक तत्व अपनी संरचनात्मक व्यवस्था के साथ निरंतर विकास क्रम में रहते हैं। इसी से प्राण अवस्था का उद्भव होता है, जो जैविक ऊर्जा का आधार है और वनस्पति जगत में पोषण, वृद्धि तथा प्रजनन की क्रियाओं को संचालित करती है। प्राण अवस्था से विकसित जीव अवस्था में चेतना की प्रारंभिक झलक दिखाई देती है, जहाँ संवेदना, गति और इच्छा-आशा-भय जैसी प्रवृत्तियाँ प्रकट होती हैं, जिसका प्रतिनिधित्व पशु-पक्षी करते हैं। अंततः ज्ञान अवस्था मानव जीवन की सर्वोच्च अवस्था है, जहाँ कल्पना, विवेक और समझने की क्षमता विकसित होकर केवल जीविका तक सीमित न रहकर अर्थ, उद्देश्य और मूल्य-आधारित जीवन का मार्ग प्रशस्त करती है। इस प्रकार, मध्यस्थ दर्शन इन चारों अवस्थाओं को परस्पर पूरक और सहअस्तित्वकारी मानते हुए मानव को प्रकृति के साथ संतुलन और सामंजस्य स्थापित करने का दार्शनिक आधार प्रदान करता है।

अवस्थाओं के बीच नियम, नियंत्रण और संतुलन

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार ऊपर वर्णित अवस्थाओं के बीच एक तय नियम, नियंत्रण और संतुलन है। वे निम्नलिखित नियमों का पालन करती हैं:

विकास क्रम का नियम - प्रकृति की चारों अवस्थाएं एक विकास क्रम में व्यवस्थित हैं। प्रत्येक उच्च अवस्था निम्न अवस्था पर आधारित होती है लेकिन उससे अधिक जटिल और व्यापक होती है। यह विकास एकदिशीय है - पदार्थ से प्राण, प्राण से जीव, और जीव से ज्ञान की ओर।

पूरकता का नियम - चारों अवस्थाएं एक-दूसरे की पूरक हैं। उच्च अवस्था निम्न अवस्था को नकारती नहीं बल्कि उसे अपने में समाहित करके आगे बढ़ती है। मानव में भी चारों अवस्थाओं का समावेश है - शरीर (पदार्थ), प्राण ऊर्जा (प्राण), संवेदनाएं (जीव), और चेतना (ज्ञान)।

संतुलन का नियम - प्रत्येक अवस्था अपने स्वभाव और धर्म के अनुसार कार्य करती है। यह स्वाभाविक नियंत्रण प्रणाली सुनिश्चित करता है कि कोई भी अवस्था अपनी सीमा का उल्लंघन न करे। जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

मानव की विशिष्ट स्थिति और उत्तरदायित्व

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार मानव जीवन भी चेतन, निराकार एवं अविनाशी जीवन-परमाणु और भौतिक, जड़ शरीर का सहअस्तित्व है। मानव के पास सबसे विकसित भौतिक शरीर है जिसमें पूर्णतः विकसित कॉर्टेक्स और कल्पना की शक्ति है जो अन्य प्राणियों में अनुपस्थित है। मानव की यह विशिष्ट स्थिति उसे विशेष उत्तरदायित्व भी प्रदान करती है:

बोध की क्षमता - मानव एकमात्र जीव है जो चारों अवस्थाओं को समझ सकता है और उनके बीच संबंधों को पहचान सकता है। यह समझ मानव को प्रकृति के साथ सचेत सहयोग करने में सक्षम बनाती है।

संतुलन की भूमिका - ज्ञान अवस्था में होने के कारण मानव प्रकृति की अन्य अवस्थाओं के बीच संतुलन बनाए रखने की भूमिका निभा सकता है। यदि मानव जागृत होकर अपनी भूमिका को समझे तो वह प्रकृति में सामंजस्य स्थापित कर सकता है।

नैतिक चेतना - मानव में न्याय, धर्म और सत्य की अपेक्षा स्वाभाविक रूप से होती है। यह नैतिक चेतना उसे प्रकृति के साथ न्यायसंगत व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती है।

मानव चेतना और प्रकृति संबंध

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार, केवल चेतन इकाई या जीवन ही जागृति के उपरान्त मानव परंपरा में अखंड समाज का प्रमाण उत्पन्न करता है। सजगता में मानवत्व के रूप में और सामाजिक सामंजस्य में पूर्णता होती है।

जागृति का महत्व - मानव चेतना की जागृति प्रकृति के साथ सही संबंध स्थापित करने की कुंजी है। जागृत मानव प्रकृति को भोग की वस्तु के रूप में नहीं बल्कि सहअस्तित्व के सहयोगी के रूप में देखता है।

अखंड समाज की स्थापना - जागृत मानव चेतना अखंड मानव समाज की स्थापना करती है जो प्रकृति के साथ सामंजस्य में रहता है। यह समाज व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर सामूहिक कल्याण और प्राकृतिक संतुलन को प्राथमिकता देता है।

चेतना का विकास क्रम - मानव चेतना भी विकास क्रम से गुजरती है - पहले जड़ता से मुक्ति, फिर जीवों की भांति केवल जीविका तक सीमित न रहना, और अंततः ज्ञान अवस्था में पूर्ण जागृति। यह विकास प्रकृति के साथ गहरे संबंध की स्थापना करता है।

निष्कर्षतः, मध्यस्थ दर्शन यह प्रतिपादित करता है कि मानव चेतना की जागृति ही प्रकृति और समाज के साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने की मूलभूत शर्त है। जब मानव चेतना जड़ता से मुक्त होकर ज्ञान अवस्था में पूर्ण जागृति प्राप्त करती है, तब ही अखंड मानव समाज का निर्माण संभव होता है, जो व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर सामूहिक कल्याण और प्राकृतिक संतुलन को प्राथमिकता देता है। इस प्रकार, सहअस्तित्व के सहयोगी दृष्टिकोण को अपनाते हुए मानव न केवल पर्यावरणीय संकटों से मुक्ति पा सकता है, बल्कि एक न्यायपूर्ण, संतुलित और सतत वैश्विक समाज की स्थापना भी कर सकता है।

पर्यावरणीय संतुलन के लिए मध्यस्थ दर्शन के प्रस्ताव

पर्यावरणीय संकट का मुख्य कारण:

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार, समसामयिक पर्यावरणीय संकट का मूल कारण मानवीय भ्रमात्मक मानसिकता है। "सामाजिक एवं पर्यावरण संघर्ष से मानव घिर चुका है। इसका कारण भ्रमात्मक मानसिकता ही है" (madhyasth-darshan.info)। भौतिकवादी और आध्यात्मवादी दृष्टिकोणों की असफलता के कारण प्रकृति को बहुत नुकसान हुआ है। दर्शन यह स्पष्ट करता है कि न तो 'त्याग' और न ही 'भोग' के मार्ग मानवों के लिए सार्थक हुए हैं। आध्यात्मवाद एवं भौतिकवाद मानव प्रयोजन को स्पष्ट नहीं कर पाए हैं (madhyasth-darshan.info)। भौतिकवादी विधि से मानव ने धरती को घायल करने के परिणामस्वरूप जनसंख्या समस्या, पर्यावरण समस्या, आर्थिक और राजनैतिक समस्याएं उत्पन्न हुई हैं।

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार: "पर्यावरण समस्या में जलवायु, धरती, वन संबंधी बातों को सोचा गया है। ये सब के सब धरती के वातावरण में सम्पूर्णता को बनाये रखे थे। जब से मानव अपने को युद्ध, शोषण, संग्रह के आधार पर विकसित मानने लगा तब से ही इस धरती के वातावरण में स्थिति समस्त द्रव्यों का हास होने लगा। इसमें भ्रम होने का मूल कारण प्रोद्यौगिकी रहा। इसकी मुक्ति एक ही है वह है मानवीयता। मानवीयता पूर्वक ही मानव अमानवीयता से मुक्ति पा सकता है। यही सर्वमानव में, से, के लिये अपेक्षित जागृती है" (समाधानात्मक भौतिकवाद, 1998)।

पर्यावरणीय संतुलन के लिए प्रस्ताव:

अस्तित्व मूलक मानव-केंद्रित चिंतन - मध्यस्थ दर्शन प्रस्तावित करता है कि मानव चेतना-जागृति के प्रमाण को प्रमाणित करने के लिए अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन को अपनाना होगा, जिसका प्रयोजन सहअस्तित्व में जीना है।

चार आयामी मानव लक्ष्य - एक जागृत मानव चार आयामों में जीता है : स्वयं में संकल्प, परिवार में भौतिक समृद्धि, समाज में विश्वास एवं सहयोग और प्रकृति के साथ सहअस्तित्व।

ग्राम संगठन योजना और पर्यावरण संरक्षण - मध्यस्थ दर्शन की ग्राम संगठन योजना में पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता दी गई है। " परिवार और मानवता में न्याय-सुरक्षा की उपलब्धता का अर्थ है मानवीय और पर्यावरणीय संबंधों की मान्यता और उनमें निहित मूल्यों की पूर्ति।"। यह योजना निम्नलिखित क्षेत्रों को शामिल करती है: कृषि, पशुपालन, वन उत्पाद, ईंधन, मूर्तिकला और लघु-स्तरीय इकाइयां।

उत्पादन-कार्य मानसिकता का विकास - दर्शन 'व्यापार-मानसिकता' को हटाकर 'उत्पादन-कार्य' मानसिकता स्थापित करने पर बल देता है। यह दृष्टिकोण प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और सतत उपयोग को प्रोत्साहित करता है।

शिक्षा में पर्यावरणीय जागरूकता

समग्र शिक्षा दृष्टिकोण - मध्यस्थ दर्शन की शैक्षिक पद्धति में पर्यावरणीय मुद्दों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। यह शिक्षा व्यवस्था मानव के चार आयामों को संबोधित करती है: बोध/समझ, विचार/कल्पना, व्यवहारिक/सामाजिक, व्यावसायिक/प्राकृतिक।

प्रकृति के साथ संबंध की शिक्षा - शिक्षा प्रणाली में बच्चों को प्रकृति के साथ संबंध समझाए जाते हैं। परिवार के साथ रहने और पारिवारिक व्यवसायों में भागीदारी के माध्यम से उत्पादन कार्य की मानसिकता विकसित की जाती है।

समसामयिक पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान

जीवन शैली में परिवर्तन की आवश्यकता - मध्यस्थ दर्शन के अनुसार, मानव को यदि इस धरती पर रहना है तो वर्तमान जीवन शैली पर पुनर्विचार करना होगा। यह दर्शन एक वैकल्पिक जीवन शैली प्रस्तावित करता है जो प्रकृति के साथ सामंजस्य में हो।

चेतना परिवर्तन और पर्यावरण - दर्शन के अनुसार, पर्यावरणीय समस्याओं का मूल समाधान मानवीय चेतना के परिवर्तन में निहित है। चेतना परिवर्तन और जागृति के माध्यम से शिक्षा द्वारा अखंड मानव समाज, सार्वभौमिक व्यवस्था और वैश्विक क्रम संभव है।

अखंड मानव समाज और प्रकृति संतुलन - मध्यस्थ दर्शन का अंतिम लक्ष्य 'अखंड मानव समाज' एवं प्रकृति में संतुलन की स्थापना है। यह प्रस्ताव मानव-मानव संबंधों और मानव-प्रकृति संबंधों में सामंजस्य सुनिश्चित करने के लिए है।

निष्कर्ष

मध्यस्थ दर्शन मानव-प्रकृति संबंधों और पर्यावरणीय संतुलन के लिए एक अभिनव और समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। सहअस्तित्व की मूलभूत अवधारणा के आधार पर यह दर्शन न केवल वर्तमान पर्यावरणीय समस्याओं का विश्लेषण करता है बल्कि उनके समाधान के लिए व्यावहारिक प्रस्ताव भी देता है। इस दर्शन की मुख्य शक्ति यह है कि यह व्यक्तिगत चेतना परिवर्तन से लेकर सामाजिक संगठन तक, सभी स्तरों पर एक संगत और व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है। भ्रमात्मक मानसिकता से मुक्ति और अस्तित्व मूलक चिंतन को अपनाने का प्रस्ताव समसामयिक पर्यावरणीय चुनौतियों के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक है।

मध्यस्थ दर्शन की पर्यावरणीय दृष्टि की कई विशेषताएं हैं। यह दर्शन मानव जीवन के सभी आयामों को एक समग्र दृष्टिकोण से देखता है। केवल सैद्धांतिक न होकर, यह व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करता है। यह किसी विशेष धर्म, जाति या वर्ग तक सीमित नहीं है। यह तर्कसंगत और व्यवस्थित तरीके से अस्तित्वगत सत्यों को प्रस्तुत करता है।

आज के पर्यावरणीय संकट के युग में मध्यस्थ दर्शन की प्रासंगिकता को देख सकते हैं। सहअस्तित्व की अवधारणा जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मानव व्यवहार में परिवर्तन का आधार प्रदान करती है। उत्पादन-कार्य मानसिकता सतत विकास के लक्ष्यों के अनुकूल है। ग्राम संगठन योजना प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए ठोस रूपरेखा प्रदान करती है। यद्यपि मध्यस्थ दर्शन एक व्यापक और समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, फिर भी इसकी कुछ चुनौतियां हैं, जैसे : व्यापक सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता, मौजूदा शिक्षा प्रणाली में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता और बड़े पैमाने पर सामुदायिक स्वीकार्यता प्राप्त करना।

मध्यस्थ दर्शन का यह संदेश कि "मानव धर्म एक है, मानव जाति एक है" पर्यावरणीय संकट के समाधान के लिए आवश्यक वैश्विक एकता की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान है। यह दर्शन न केवल भारतीय चिंतन परंपरा को समृद्ध करता है बल्कि वैश्विक पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ सूची

1. <https://madhyasth-darshan.info/> retrieved 16 अगस्त, 2025
2. नागराज, ए. (1988). जीवन विद्या: एक परिचय. अमरकंटक: जीवन विद्या प्रकाशन
3. <https://madhyasth-darshan.info/> retrieved 16 अगस्त, 2025
4. <https://madhyasth-darshan.info/philosophy/explore-concepts/the-philosophy-of-coexistence/> retrieved 16 अगस्त, 2025
5. <https://madhyasth-darshan.info/> retrieved 16 अगस्त, 2025
6. <https://madhyasth.org/> retrieved 16 अगस्त, 2025
7. <http://madhyasth-darshan.info/> retrieved 16 अगस्त, 2025

8. <https://madhyasth-darshan.info/browse-texts/subjects/realization-centric-spiritualism/> retrieved 16 अगस्त, 2025
9. नागराज, ए. (1998). समाधानात्मक भौतिकवाद. अमरकंटक: जीवन विद्या प्रकाशन
10. <http://madhyasth-darshan.info/> retrieved 16 अगस्त, 2025
11. <https://madhyasth-darshan.info/browse-texts/basic-elements-of-madhyasth-darshan/> retrieved 16 अगस्त, 2025
12. <https://madhyasth-darshan.info/philosophy/explore-concepts/human-organization/> retrieved, 16 अगस्त, 2025
13. <https://madhyasth-darshan.info/educational-philosophy/> retrieved 16 अगस्त, 2025